बोगिधोला टी एंड ट्रेडिंग कंपनी लिमिटेड व अन्य

बनाम

हीरा लाल सोमानी

7 दिसंबर, 2007

(न्यायमुर्ति एस. बी. सिन्हा और जी. एस. सिंघवी)

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908- आदेश 8 नियम 10 वाद का आह्वान करना- सम्मन की तामील के बावजूद प्रतिवादी की अनुपस्थिति-आदेश 8 नियम 10 के अन्तर्गत डिक्री के लिए प्रार्थना- वादी ने किसी भी गवाह को परीक्षित कराने से इनकार कर दिया-एकपक्षीय डिक्री- एकपक्षीय डिक्री को अपास्त् करने के लिए वाद परिसीमा से वर्जित होने के आधार पर प्रस्तुत प्रार्थना पत्र अधिनस्थ न्यायालय द्वारा खारिज किया गया। यह अवधारणा सही नही है यह विचार करने का न्यायालय का कर्तव्य है कि अगर वाद परिसीमा से वर्जित है यद्यपि ऐसी कोई प्रतिरक्षा बचाव पक्ष द्वारा नहीं उठाई गई है। परिसीमा द्वारा वर्जित मामलों में, न्यायालय को डिक्री पारित करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं है-अन्यथा वादी ही अपना मामला साबित करने हेतु बाध्य है। विचारण न्यायालय ने आदेश 8 नियम 10 को लागू करने में त्रुटि कारित की है-एकपक्षीय डिक्री को अपास्त किया गया। परिसीमा अधिनियम, 1963 धारा 3 पक्षकारान् व्यावसायिक शर्तों पर थे।

अपीलार्थीगण द्वारा प्रत्यर्थी को वर्ष 1984 और 1985 के लिए 'मेड चाय' की आपूर्ति करनी थी। प्रतिवादी द्वारा याचिकाकर्ता को दोनों वर्ष 'मेड चाय' की कम मात्रा की आपूर्ति की गई। प्रत्यर्थी द्वारा सप्लाई की हुई चाय की बची हुई राशि के लिए वाद दायर किया गया। सम्मन की तामील के बावजूद अपीलार्थी उपस्थित नहीं हुआ। प्रत्यर्थी द्वारा न्यायालय के समक्ष अन्तर्गत आदेश 8 नियम 10 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत डिक्री जारी करने की प्रार्थना की। उसके द्वारा किसी भी गवाह को परीक्षित कराने से इन्कार कर दिया। विचारण न्यायालय द्वारा प्रथम दृष्ट्या मामला प्रत्यर्थी-वादी के पक्ष में बनना पाये जाने पर एकपक्षीय डिक्री पारित की गई।

वर्ष 1997 में डिक्री के निष्पादन के लिए एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया। उक्त निष्पादन मामले में अपीलार्थीगण को सम्मन तामील हेतु भेजे गये थे। निष्पादन कार्यवाही को जुलाई, 2000 में स्थगित कर दिया गया। सितम्बर, 2000 में अपीलार्थीगण ने आदेश 9 नियम 13 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एकपक्षीय डिक्री को अपास्त कराने हेतु प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। उक्त प्रार्थना पत्र को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थीगण द्वारा कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण उक्त प्रार्थना पत्र पेश करने में परिसीमा अधिनियम 1923 के अनुच्छेद 123 में संलग्न सूची के अनुसार नहीं दिया था। उपरोक्त के विरूद्ध पुनरीक्षण भी इस स्वतंत्रता के साथ खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थीगण मूल डिक्री की अपील पेश कर सकते है। तत्पश्चात् अपीलार्थीगण द्वारा विलम्ब को क्षमा करने के

प्रार्थना पत्र के साथ एक अपील प्रस्तुत की गई। उच्च न्यायालय द्वारा विलम्ब को क्षमा करने से इन्कार कर दिया और परिणाम स्वरूप अपील खारिज कर दी।

अपीलीय न्यायालय में, अपीलार्थीगण द्वारा तर्क दिया गया कि वादी-प्रतिवादी को अपने दावे के सम्बन्ध मंे सद्भावनापूर्वक विचारण न्यायालय को सतंुष्ट करना आदेशात्मक था और अन्तिम अग्रिम भुगतान कथित रूप से 19 जून, 1985 को किया जा चुका है, उक्त वाद दिनांक 2 जनवरी, 1989 को प्रस्तुत किया गया जो परिसीमा से वर्जित था।

न्यायालय द्वारा अपील निस्तारित करते हुए अभिनिर्धारित किया कि-

1. यह न्यायालय उक्त मामले में हस्तक्षेप नहीं करेगा यद्यपि यह गंभीर मामला प्रतीत होता है। अपीलकर्ता ने दिखाया था कि एकपक्षीय डिक्री पूर्व दृष्ट्या मस्तिष्क के गैर प्रयोग से ग्रस्त है। यदि न्यायाधीश ने वाद विवाद में दिए गये कथनों पर भी मस्तिष्क लगाया होता तो उन्हें खुद से यह सवाल पूछना चाहिए था कि क्या लिखित में किसी अभिस्वीकृति के अभाव में जिसके परिणाम स्वरूप परिसीमा की अवधि नये सिरे से शुरू होगी, वाद चल सकता था।

परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 में प्रावधानित है कि कोई न्यायालय किसी एक पक्षकार के पक्ष में किसी भी राहत के लिए अपने क्षेत्राधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं करेगा, यदि वह परीसीमा द्वारा वर्जित पाया जाता है। हालांति ऐसा कोई बचाव नहीं लिया गया, कानुनन रूप से

न्यायालय के लिए यह विचार किया जाना जरूरी है कि कोई वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है या नहीं। इस घटना में यह पाया गया है कि वाद परीसीमा द्वारा वर्जित था, न्यायालय को डिक्री पारित करने का कोई अधिकार नहीं था, इसलिए विचारण न्यायालय के लिए यह आवश्यक था कि अपने सामने सही प्रश्न रखे, विशेषकर जब बिना मौखिक साक्ष्य के वाद में वादी के द्वारा उठाये गये अभिवचनों को नहीं उठाया गया हो, स्थापित नहीं किया जा सकता, इसलिए यह ऐसा मामला नहीं था जहां न्यायालय आदेश 8 नियम 10 के प्रावधानों को लागू करता। अन्यथा भी मामला एकपक्षीय सुनवाई के लिए निर्धारित किया गया था। विचारण न्यायालय ने कथन किया कि वाद और उसके साथ अन्य दस्तावेजों से मात्र प्रथम दृष्टया मामला बनना पाया था, जो डिक्री पारित करने के लिए पर्याप्त नहीं था। वादी अपना मामला साबित करने के लिए बाध्य था। { पेरा 11) (1158-एफ, जी; 1159-ए,बी,सी}

2. इस मामले के विशिष्ट तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह एक उपयुक्त मामला है जहॉ उच्च न्यायालय को देरी को माफ कर देना चाहिए था। न्यायहित में, एकपक्षीय डिक्री को अपास्त किया जाता है। हालांकि, यह आदेश अपीलकर्ता द्वारा निष्पादन न्यायालय के समक्ष एक लाख रूपये की राशि जमा करने की शर्त के अध्यधीन होगा और खर्चे के लिए प्रत्यर्थी को पच्चीस हजार रूपये। {पेरा 12 और 13) (1159- सी,डी,ई}

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 5771/2007.

गुवाहाटी उच्च न्यायालय के आर.एफ.ए. नम्बर 122/2004. में एम. सी. सं. 3398/2004 अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 3.1.2007 से।

विजय हंसारिया, स्नेहा कालिता और शंकर अपीलार्थीगण की ओर से।

मनीष गोस्वामी, अशोक पाणिग्रही (मैसर्स मैप एण्ड कंपनी) प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय द्वारा निर्णय सुनाया गया-

न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा,

1. अनुमति स्वीकार की गयी।

2. अपील एम सी संख्या 3398/2004 गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 03.01.2007 के निर्णय एवं आदेश के विरूद्ध निदेर्शित हैं, जिसके अन्तर्गत अपीलार्थीगण ने वाद में पारित निर्णय और डिक्री दिनांक 19.04.1990 से अपील की है। वाद संख्या 2/89 एफ को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थीगण ने उक्त अपील को दायर करने में 10 महीने की देरी को माफ करने का पर्याप्त कारण नहीं दिखाया था।

3. पक्षकारान व्यावसायिक शर्तों पर थे। अपीलार्थीगण को 22000 किलोग्राम की आपूर्ति करनी थीे 1984 के सीजन के लिए मेड चाय और 50000 किलोग्राम चाय को 1985 सीजन के लिए मेड चाय। हांलाकि,

अपीलार्थीगण ने केवल 5547 किलोग्राम की आपूर्ति की। 1984 मौसम के लिए मेड चाय और 18245 किलोग्राम मौसम के लिए बनाई मेड चाय का। प्रत्यर्थी ने 18 प्रतिशत की दर से ब्याज सहित 52,269.66 पैसे शेष कीमत के लिए वाद दायर डिक्री के लिए किया, एक वाद टर्मिनल चाय आपूर्ति के लिए शेष कीमत के लिए दायर किया गया। वादपत्र के पैराग्राफ 5 में प्रत्यर्थी ने अन्य बातों के साथ-साथ कहा

''प्रतिवादियों द्वारा वादी को उपलब्ध कराई गयी 1985 सीजन की अन्य शेष चाय की कीमत को अन्तिम रूप नहंी दिया जा सका क्योंकि उसके लिए कोई उचित बाजार नहीं था। और इसलिए वह जोरहाट में बिक्री योग्य नहीं थी। निर्देश के अनुसार/प्रतिवादीगण की चर्चा के अनुसार, 1985 सीजन की 14796 निर्मित चाय की शेष गुणवता को गुवाहाटी और कलकता में चाय एक्शन बाजार में भेजा गया था। निलामी बाजारों की बिक्री पर उक्त चाय की बिक्री आय को पहले से किये गये अग्रिमों के साथ समायोजित किया जाना था। वादी ने अभिसाक्षी को 18.04.1985 के बाद वादी ने 130000 रूपये सहित कुल 622116 रूपये का भुगतान किया था जैसा कि अनुसूची ए में दिखाया गया है।''

इस अपील में उल्लेखित पहला विधेयक इस प्रकार हैः-

बिल दिनांकित 5.6.85 के लिए	रु. 46,595.80
बिल दिनांकित 5.6.85 के लिए	रु. 86,225.00
16.8.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 79,824.91

26.8.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 4,608.60
9.9.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 9,101.83
19.9.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 3,766.70
12.11.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 2,502.54
9.12.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 30,615.48
23.12.85 पर बिक्री के लिए आय	रु. 3,09,119.62
3.1.86 बिक्री आय के लिए	रू. 5,945.78
20.1.86 बिक्री आय के लिए	रू. 9,784.28
	रु. 3,18,089.54

4. कथित तौर पर, सम्मन की तामील के बावजूद अपीलार्थीगण उपस्थित नहीं हुए। वादी-प्रतिवादी ने विचारण न्यायालय के समक्ष प्रार्थना की कि सिविल प्रक्रिया संहिता आदेश 8 नियम 10 के अन्तर्गत एक डिक्री पारित कि जावे। उन्होंने किसी भी गवाह को परीक्षित करने से इन्कार कर दिया। विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 19.04.1990 को एक निर्णय और आदेश द्वारा वाद को डिक्री कर कथन कया कि:-

''वादी पक्ष के विद्वान अधिवक्ता अपना वकालतनामा दाखिल करते हुए उपस्थित है। प्रतिवादी पक्ष बिना किसी कारण के अनुपस्थित है। इस न्यायालय के पिछले आदेशों को देखा, मुकदमा एकपक्षीय सुनवाई के लिए लिया गया है। वादी के विद्वान अधिवक्ता को सूना गया, उन्होंने न्यायालय

को प्रस्तूत किया सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8 नियम 10 के अन्तर्गत कार्यवाही करने के लिए किसी भी अभियोजन साक्षी को परीक्षित कराने से इन्कार कर दिया, इसलिए वाद पत्र और अपने वाद पत्र के समर्थन में वादी द्वारा प्रस्तुत प्रासंगिक दस्तावेजों का अवलोकन किया। वादपत्र के अनुसार प्रथम दृष्टया मामला वादी के पक्ष में साबित हुआ है।

वाद को एकपक्षीय रूप से डिक्री कर 5,22,669.66 मय खर्चा और भविष्य के ब्याज के साथ, जैसा कि वाद में प्रार्थना की गई थी।

5. अपीलार्थीगण ने तर्क दिया कि उन्हें उक्त डिक्री पारित होने की जानकारी नहीं थी। वर्ष 1997 में निष्पादन का मामला दायर किया गया था। उक्त निष्पादन मामले में अपीलार्थीगण को सम्मन भेजा गया था उक्त निष्पादन मामले में श्री तपन गोगोई को एक अधिवक्ता के रूप में नियुक्त किया गया था। हांलाकि आगे कोई कदम नहीं उठाया गया। दिनांक 15.07.2000 को निष्पादन कार्यवाही स्थगित कर दी गयी।

6. सितम्बर 2000 के महीने में, अपीलार्थीगण द्वारा एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया। वाद दायर करने में हुई देरी को माफ करने के लिए एक आवेदन भी प्रस्तुत किया गया था। उक्त आवेदन दिनांक 22.09.2003 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था क्यांेकि अपीलार्थी कथित रूप से आवेदन पेश करने में देरी का कारण संतोषप्रद

कारण से नहीं बता सके और परिसीमा अधिनियम, 1923 से जुडी अनुसूचि के अनुच्छेद 123 के मध्यनजर भी नहीं बता सके।

7. उसके विरूद्ध एक सिविल पुनरीक्षण आवेदन प्रस्तुत किया गया था जिसे उच्च न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 02.01.2004 द्वारा खारिज कर दिया था। हांलाकि, अपीलार्थीगण को मूल डिक्री के खिलाफ अपील करने की स्वतंत्रता दी गयी थी इसके बाद अपीलार्थीगण द्वारा देरी की माफी के लिए एक आवेदन के साथ एक अपील दायर की गई। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के कारण देरी को माफ करने से इन्कार कर दिया और परिणाम स्वरूप अपील खारिज कर दी।

8. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री हंसारिया ने अन्य तथ्यों के साथ-साथ यह प्रस्तुत किया की उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पारित करने में एक गंभीर त्रुटि की है। क्योकि वह इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थीगण ने जवाब दावा पेश नहीं किया था, वादी-प्रतिवादी के दावे की प्रमाणिकता के बारे में खुद को संतुष्ट करना विचारण न्यायालय के लिए अनिवार्य था। विद्वान अधिवक्ता ने आग्रह किया कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अन्तिम अग्रिम भुगतान 19.06.1985 को किया जाना बताया गया था, जो वाद 02.01.1989 को दायर किया गया था, जो परिसीमा से वर्जित था।

9. दूसरी ओर प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह मानते हुए विद्वान विचारण न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8 नियम 10 के सन्दर्भ में डिक्री नहीं देनी चाहिए थी। अपीलार्थी अपील देरी से दायर करने के बारे में स्पष्टीकरण देने के लिए बाध्य था। अपील मुकदमें की निरन्तरता है, विद्वान अधिवक्ता यह प्रस्तुत करेंगे कि यदि परीसीमा द्वारा वर्जित होने के आधार पर उस पर विचार नहीं किया जा सकता था तो अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोंग में उच्च न्यायालय द्वारा डिक्री को अपास्त करने का प्रश्न उठता है नहीं और उत्पन्न हो सकता है।

10. दिनांक 16.04.2007 के आदेश के सन्दर्भ में नोटिस जारी करते हुए इस न्यायालय ने अपीलार्थीगण को राशि जमा करने का निर्देश दिया। उक्त तिथि से चार सप्ताह के भीतर निष्पादन न्यायालय के समक्ष दो लाख रूपये विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री हंसारिया द्वारा हमारे समक्ष कहा गया, उपरोक्त राशि दिनांक 25.06.2007 को या उसके आस-पास जमा की गई है।

11. आमतौर पर हम ऐसे मामलों में दखल नहीं देते, तथापि यह एक गंभीर मामला प्रतीत होता है। हमसे पहले के अपीलकर्ता सक्षम हैं सिद्व करे की न्यायालय द्वारा एकपक्षीय डिक्री दिनांक 19.04.1990 पारित की गयी। अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जोरहाट, प्रथम मस्तिष्क का उपयोग न करने से पीड़ित है। यदि विद्वान न्यायाधीश ने वाद पत्र में दिये गये

कथनों पर भी अपना मस्तिष्क प्रयोग किया होता तो उन्हें स्वंय से यह प्रश्न पूछना चाहिए था कि क्या लिखित में किसी स्वीकृति के अभाव में, जिसके परिणाम स्वरूप परिसीमा की अवधि नए सिरे से शुरू होगीे, ऐसा डिक्री दिया जाता है। प्रावधानित है कि न्यायालय किसी पक्षकार के पक्ष में राहत के लिए अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं करेगा यदि वह परिसीमा विधिक द्वारा वर्जित है। हालांकि ऐसा बचाव नहीं उठाया गया हैं, कानून न्यायालय यह विचार करने के लिए बाध्य है कि कोई वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है या नहीं। इस घटना में यह पाया गया कि वाद परिसीमा द्वारा वर्जित था, न्यायालय के पास डिक्री पारित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, इसलिए विद्वान विचारण न्यायालय के लिए यह आवश्यक था कि वह अपने सामने सही प्रश्न रखे, तब जब मौखिक साक्षी के बिना वाद में उठाये गये अभिवचन को स्थापित नहीं किया जा सका है, इसलिए यह ऐसा मामला नहीं था जहा न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8 नियम 10 के प्रावधानों को लागू कर सकता था अन्यथा भी मुकदमा एकपक्षीय सुनवाई के लिए निर्धारित किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने कहा कि वादी और अन्य दस्तावेजों से केवल प्रथम दृष्टया मामला बनना पाया गया था जो वाद में डिक्री पारित करने के लिए पर्याप्त नहीं था, इसलिए वादी अपने मामले को साबित करने के लिए बाध्य था।

12. उपरोक्त कारणों से इस मामले के विशिष्ठ तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हम सोचते है कि यह एक उपयुक्त मामला है जहॉ

उच्च न्यायालय को देरी को माफ कर देना चाहिए था, इसलिए हम उच्च न्यायालय के फैसले को अपास्त करते है। आमतौर पर हम अपील की योग्यता के आधार पर ही मामले को विचार के लिए वापस उच्च न्यायालय में भेज देते, लेकिन जैसा कि हमने स्वंय मामले के रिकॉर्ड को देखा है, हमारी राय है कि यदि हम दिनांक 19.04.1990 की एकपक्षीय डिक्री को निरस्त करे। हम तदानुसार निर्देश देते हैं।

13. हांलाकि यह आदेश इस शर्त कि अधीन होगा कि अपीलार्थीगण को रूपयों की अतिरिक्त राशि जमा करनी होगी। निष्पादन से पहले एक लाख न्यायालय जो मुकदमे के परिणाम के अधीन होगा, अपीलार्थी करेेगें। आगे रूपये का भुगतान करे। खर्च को प्रत्यर्थी को 25000 रूपये प्रतिवादी द्वारा जमा कि राशि वापस लेने का हकदार होगा, अपीलार्थी के द्वारा जमा कराई गयी अमानत राशि समाप्त करने पर।

14. अपीलार्थी विचारण न्यायालय के समक्ष लिखित बयान दाखिल कर सकते है। छः सप्ताह और विद्वान न्यायालय की वांछनीयता पर विचार कर सकते है, इसकी प्राप्ति की तारीख से तीन महीने के भीतर मुकदमें का निपटारा करना है।

15. उपरोक्तानूसार अपील का निस्तारण किया जाता है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी प्रमोद कुमार मलिक (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।